Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग (UPPSC)

कला एवं संस्कृति

(उत्तर प्रदेश के विशेष संदर्भ सहित)

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: UPPM13

उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग (UPPSC)

कला एवं संस्कृति

(उत्तर प्रदेश के विशेष संदर्भ सहित)

दृष्टि The Vision

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009

दूरभाष : 011-47532596, 8750187501

टोल फ्री : 1800-121-6260

Web : www.drishtiIAS.com

E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें

www.facebook.com/drishtithevisionfoundation

www.twitter.com/drishtiias

UPPCS DLP

विषय सूची (Contents)

1. कला एवं संस्कृति : एक परिचय	**5 - 14**
1.1 कला एवं संस्कृति का अर्थ	5
1.2 सभ्यता और संस्कृति में अंतर	6
1.3 भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ	7
1.4 उत्तर प्रदेश की प्रमुख धरोहरें	9
2. भारतीय वास्तुकला	**15 - 34**
2.1 सैंधव वास्तुकला	15
2.2 बौद्ध वास्तुकला	16
2.3 मंदिर वास्तुकला	17
2.4 बुंदेलखंड का स्थापत्य	21
2.5 इंडो-इस्लामिक वास्तुकला	22
2.6 मुगलकालीन स्थापत्य	26
2.7 आधुनिक वास्तुकला	30
3. भारतीय मूर्तिकला	**35 - 55**
3.1 सैंधव मूर्तिकला	35
3.2 मौर्यकालीन मूर्तिकला	37
3.3 मौर्योत्तरकालीन मूर्तिकला	39
3.4 गुप्तकालीन मूर्तिकला	42
3.5 मध्यकालीन मूर्तिकला	44
3.6 मूर्तिकला में आधुनिकता	51
4. भारतीय नृत्य परंपरा	**56 - 72**
4.1 शास्त्रीय नृत्य	56
4.2 लोकनृत्य	61
4.3 उत्तर प्रदेश के लोकनृत्य	68
4.4 प्रमुख आधुनिक नृत्य	69
5. भारतीय संगीत	**73 - 84**
5.1 संगीत का इतिहास एवं सात स्वर	73
5.2 उत्तर प्रदेश में प्रचलित लोकगीत	74

5.3 संगीत में घराना परंपरा 75
5.4 संगीत जगत के प्रमुख व्यक्तित्व 76
5.5 भारतीय संगीत के प्रमुख वाद्ययंत्रों का परिचय 78

6. भारतीय चित्रकला **85 - 106**

6.1 भारतीय चित्रकला की प्रमुख विशेषताएँ 85
6.2 प्रागैतिहासिक चित्रकला 87
6.3 सिंधु घाटी सभ्यता की चित्रकला 88
6.4 प्राचीन भारतीय गुफा चित्रकलाएँ 88
6.5 पाल शैली की विशेषताएँ 92
6.6 पश्चिमी भारतीय शैली (12-16वीं शताब्दी) 93
6.7 चित्रकला की राजस्थानी शैली 94
6.8 मुगल चित्रकला 96
6.9 पहाड़ी चित्रकला 98
6.10 आधुनिक काल में चित्रकला 99
6.11 कुछ प्रमुख चित्रकार 103

7. पारंपरिक भारतीय वस्त्र, भोजन एवं रीति-रिवाज **107 - 126**

7.1 भारत में परिधान का इतिहास 107
7.2 महिलाओं के वस्त्र 108
7.3 पुरुषों के वस्त्र 111
7.4 पगड़ी के विभिन्न प्रकार 113
7.5 भारत में विभिन्न राज्यों का परंपरागत भोजन 115
7.6 भारत के मेले एवं त्योहार 116

8. भारत की परंपरागत युद्धकलाएँ एवं खेल **127 - 138**

8.1 भारत की प्रमुख युद्धकला 127
8.2 खेल संबंधी महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ एवं पुरस्कार 129
8.3 सरकार द्वारा स्थापित खेल पुरस्कार 130

9. भारत की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ और भाषाएँ **139 - 159**

9.1 प्राचीन काल की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ 139
9.2 मध्य काल की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ 144
9.3 आधुनिक काल की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ 148
9.4 भारत की शास्त्रीय भाषाएँ 153
9.5 उत्तर प्रदेश से संबंधित साहित्य 154

अध्याय
1

कला एवं संस्कृति : एक परिचय
(Art and Culture: An Introduction)

कला एवं संस्कृति समाज एवं जीवन के विकास के मूल्यों की सम्यक् संरचना है। यह समाज में अंतर्निहित गुणों और उच्चतम आदर्शों के समग्र रूप का नाम है, जो उस समाज के सोचने-विचारने, कार्य करने, खाने-पीने, बोलने, नृत्य, गायन, साहित्य, कला आदि में परिलक्षित होती है।

जवाहरलाल नेहरू के अनुसार, "कला एवं संस्कृति की कोई निश्चित परिभाषा नहीं दी जा सकती, परंतु इसके लक्षण देखे जा सकते हैं। हर जाति अपनी संस्कृति को विशिष्ट मानती है। संस्कृति एक अनवरत मूल्यधारा है। यह जातियों के आत्मबोध से शुरू होती है। इस मुख्यधारा में संस्कृति की दूसरी धाराएँ मिलती जाती हैं तथा उनका समन्वय होता जाता है। इसलिये किसी जाति या देश की संस्कृति उसी मूल रूप में नहीं रहती, बल्कि समन्वय से वह और अधिक संपन्न और व्यापक हो जाती है।"

1.1 कला एवं संस्कृति का अर्थ *(Meaning of the Art and Culture)*

कला *(Art)*

भारतीय परंपरा में कला के अंतर्गत वे सारी क्रियाएँ आती हैं, जिनमें कौशल अपेक्षित है। दूसरे शब्दों में, कला एक प्रकार का कृत्रिम निर्माण है जिसमें शारीरिक और मानसिक कौशलों का प्रयोग होता है। **प्रारंभिक कला** शब्द का प्रयोग भरत द्वारा रचित नाट्यशास्त्र में मिलता है। इसके अलावा 'कामसूत्र', 'शुक्रनीति', प्रबंधकोश (जैन ग्रंथ), ललितविस्तार एवं कलाविकास इत्यादि भारतीय ग्रंथों में कला का वर्णन है। वर्तमान में कला को मानविकी के अंतर्गत रखा जाता है, जिसके अंतर्गत दर्शन, साहित्य, इतिहास और भाषाविज्ञान आदि आते हैं। परंपरागत रूप से निम्नलिखित को कला कहा जाता है। जैसे- स्थापत्यकला, मूर्तिकला, चित्रकला, रंगमंच, संगीत, नृत्य, काव्य आदि।

इसके अलावा आधुनिक काल में कॉमिक्स, फोटोग्राफी, विज्ञापन तथा चलचित्रण जुड़ गए।

संस्कृति *(Culture)*

'संस्कृति' का शाब्दिक अर्थ उत्तम या सुधरी हुई स्थिति से है। संस्कृति किसी समाज में पाए जाने वाले, उच्चतम मूल्यों और आदर्शों की वह चेतना है जो सामाजिक प्रथाओं, रीति-रिवाज़ों, चित्तवृत्तियों, भावनाओं, मनोवृत्तियों, रहन-सहन और आचरण के साथ-साथ उनके द्वारा भौतिक पदार्थों को विशिष्ट स्वरूप दिये जाने में अभिव्यक्त होती है। अंग्रेज़ी में संस्कृति के लिये 'कल्चर' (Culture) शब्द का प्रयोग किया जाता है, जो लैटिन भाषा के 'कल्ट या कल्टस' से लिया गया है, जिसका शाब्दिक अर्थ है- विकसित करना या परिष्कृत करना। संक्षेप में 'संस्कृति' अपनी बुद्धि के प्रयोग से अपने चारों ओर की प्राकृतिक परिस्थितियों को निरंतर सुधारती और उन्नत करती रहती है। ऐसी प्रत्येक जीवन-पद्धति, रीति-रिवाज़, रहन-सहन, आचार-विचार, नवीन अनुसंधान और वह आविष्कार, जिससे मनुष्य के जीवन स्तर में बदलाव होता है और वह विचारों से पहले की अपेक्षा ऊँचा उठता है तथा सभ्य बनता है, संस्कृति का ही अंग है। सरल शब्दों में कह सकते हैं कि संस्कृति उस विधि का प्रतीक है, जिसमें हम सकारात्मक दिशा में सोचते और कार्य करते हैं।

संस्कृति के भेद

भौतिक | अभौतिक

भौतिक

भौतिक संस्कृति के अंतर्गत प्रौद्योगिकी, कला के विभिन्न रूप, वास्तुकला, भौतिक वस्तुएँ और घरेलू प्रयोग के सामान, कृषि, व्यापार एवं वाणिज्य, युद्ध एवं अन्य सामाजिक कार्यकलाप आदि शामिल हैं।

रूमी दरवाज़ा

- अवध के नवाबों के शहर लखनऊ में 1784 ई. में नवाब आसफ-उद्-दौला द्वारा बनवाया गया। रूमी दरवाज़ा विशेष आकर्षण का केंद्र है।
- इस दरवाज़े की लंबाई 60 फीट है।
- नवाब ने 1784 ई. के अकाल के समय लोगों को रोज़गार प्रदान करने के उद्देश्य से इस दरवाज़े का निर्माण करवाया था।
- तुर्की के प्राचीन इस्तांबुल शहर के भव्य दरवाज़े की प्रतिकृति के रूप में इस दरवाज़े का निर्माण करवाया गया था।
- प्राचीन समय में यह दरवाज़ा पुराने लखनऊ शहर का प्रवेश द्वारा हुआ करता था। इसे तुर्की गेट के नाम से भी जाना जाता था।

कैसरबाग पैलेस

- इसका निर्माण वर्ष 1848-50 में नवाब वाज़िद अली शाह के द्वारा करवाया गया था।
- यह भवन मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित है।
- इस महल में शानदार खंभे और रेलिंग, हिंदू मंडप, सुंदर और मनमोहक मीनारें बनी हुई हैं। यह महल मुगल और यूरोपीय शैली का मिश्रण है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- संस्कृति को मुख्यत: सुरुचि एवं अच्छे व्यवहार के रूप में समझा जाता है। वस्तुत: संस्कृति का संबंध आत्मा से है और सभ्यता का संबंध क्रियाकलापों से।
- संस्कृति, संस्कारित जीवन जीने का एक ढंग है। संस्कृति और सभ्यता दोनों ही परिवर्तनशील हैं। संस्कृति सभ्यता की उच्च अवस्था है।
- पूर्वजों से प्राप्त संस्कृति ही सांस्कृतिक विरासत कहलाती है मानव ने जिस सांस्कृतिक विरासत के रूप को अपनाया उसे 'मानवता की विरासत' कहते हैं।
- संस्कृति के मूलभूत घटक, अभिवृत्ति, मान्यताएँ, भाषा, प्रथा, संस्कार, व्यवहार, आस्था (धर्म), व्यंजन, नाट्य कला आदि हैं।
- 'सांस्कृतिक विरासत' पीढ़ी-दर-पीढ़ी मिलने वाली बौद्धिक संपदाओं का योग है।
- धर्म भारतीय संस्कृति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंग है।
- संस्कृतीकरण वह प्रक्रिया है, जिसमें ज्ञान-विज्ञान, विश्वास, रीति-रिवाज़, नैतिक मूल्य तथा नियम-कानून आदि सम्मिलित होते हैं।
- झाँसी की स्थापना ओरछा के शासक बीर सिंह बुंदेला के द्वारा की गई थी।
- बुलंद दरवाज़ा हिंदू और फारसी स्थापत्य कला का एक अद्भुत उदाहरण है।
- आगरा स्थित जामा मस्जिद अपने मीनार रहित ढाँचे तथा विशेष प्रकार के गुंबद के लिये जानी जाती है।
- गुप्तकाल में बना दशावतार मंदिर ईंट-स्थापत्य का एक उत्कृष्ट नमूना है।
- भगवान बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के उपरांत अपना प्रथम उपदेश सारनाथ में दिया था।
- आगरा में स्थित एत्मादुद्दौला के मकबरे में सर्वप्रथम पित्राद्रा तकनीक का प्रयोग किया गया।
- आगरा के किले में स्थित जहाँगीरी महल (शहजादा सलीम का आवास) पर ग्वालियर किले एवं हिंदू कला का जबरदस्त प्रभाव है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषताओं के संदर्भ में विचार कीजिये-
   1. प्राचीनता 2. निरंतरता
   3. अनेकता में एकता 4. राष्ट्रीयता

   उपर्युक्त में से कौन-सा/से विकल्प सत्य है/हैं?
   (a) केवल 1 (b) केवल 2 और 3
   (c) केवल 1, 2 और 3 (d) उपर्युक्त सभी
2. प्रारंभिक 'कला' शब्द किसके द्वारा रचित नाट्यशास्त्र में मिलता है?
   (a) भरत (b) कालिदास
   (c) गौतम (d) कौटिल्य
3. प्रबंध कोश क्या है?
   (a) बौद्ध ग्रंथ (b) जैन ग्रंथ
   (c) शैव ग्रंथ (d) वैष्णव ग्रंथ
4. निम्नलिखित में से सही कथन चुनिये:
   (a) संस्कृति सदैव आगे बढ़ती है, परंतु सभ्यता नहीं।
   (b) संस्कृति की माप का एक निश्चित मापदंड होता है,जबकि सभ्यता का नहीं।
   (c) संस्कृति बिना प्रयत्न के हस्तांतरित होती है, किंतु सभ्यता नहीं।
   (d) सभ्यता वह है, जो हम बनाते हैं; जबकि संस्कृति वह है, जो हम हैं।
5. निम्नलिखित में से कौन-सा कथन असत्य है?
   (a) सहिष्णुता भारतीय संस्कृति को स्थायित्व प्रदान करती है।
   (b) भारतीय संस्कृति रोम तथा यूनानी संस्कृति के समकालीन है।
   (c) भारतीय संस्कृति में समन्वय की प्रक्रिया विद्यमान है।
   (d) आध्यात्मिकता तथा भौतिकता का समन्वय भारतीय संस्कृति की विशिष्ट पहचान है।
6. निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सत्य है?
   (a) सभ्यता में परिवर्तन व सुधार संस्कृति की अपेक्षा ज्यादा कठिन है।
   (b) सभ्यता अमूर्त है, जबकि संस्कृति मूर्त है।
   (c) सभ्यता साधन है, जबकि संस्कृति साध्य है।
   (d) सभ्यता आंतरिक है जबकि संस्कृति बाह्य है।
7. निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सत्य नहीं है?
   (a) संस्कृति सामाजिक नियंत्रण में बाधा डालती है।
   (b) संस्कृति व्यवहारों में एकरूपता लाती है।
   (c) संस्कृति मानव को मूल्य एवं आदर्श प्रदान करती है।
   (d) संस्कृति समाजीकरण में योगदान देती है।
8. निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही है?
   (a) संस्कृति मनुष्य के सभी समाजों की एक सार्वभौमिक विशेषता नहीं है।
   (b) व्यक्ति उच्च बुद्धिमत्ता के आधार पर संस्कृति को बिना सीखे प्राप्त कर सकता है।
   (c) मनुष्यों का व्यवहार उस संस्कृति से निर्धारित होता है, जिससे वे संबंधित होते हैं।
   (d) पशुओं की अपने-अपने समाजों में संस्कृति होती है।
9. सामाजिक नृविज्ञानी 'भौतिक एवं अभौतिक' संस्कृति में पाते हैं-
   (a) समानता (b) असमानता
   (c) (a) और (b) दोनों (d) इनमें से कोई नहीं

उत्तरमाला

1. (c) 2. (a) 3. (b) 4. (d) 5. (b) 6. (c) 7. (a) 8. (c) 9. (b)

अभ्यास प्रश्न (मुख्य परीक्षा)

1. कला एवं संस्कृति को परिभाषित कीजिये। इस संदर्भ में सभ्यता एवं संस्कृति में तुलनात्मक अंतर स्पष्ट कीजिये।
2. उत्तर प्रदेश में स्थित प्रमुख धरोहर स्थलों का संक्षिप्त वर्णन कीजिये।
3. भारतीय संस्कृति की विशेषताओं का विस्तृत वर्णन कीजिये।

अध्याय
2

भारतीय वास्तुकला (Indian Architecture)

मानव सभ्यता ने जैसे-जैसे प्रगति की, वैसे-वैसे वास्तुकला व स्थापत्य कला के रूपों में भी परिवर्तन आता गया। भारत में प्रागैतिहासिक काल से लेकर 12वीं सदी तक स्थापत्य कला के विकास में निरंतरता दिखती है। यद्यपि भारतीय कला पर विदेशी प्रभाव प्रारंभ से ही बार-बार पड़ता रहा है, तथापि कलाओं का भारतीय स्वरूप बरकरार रहा। अत: 13वीं सदी से लेकर ब्रिटिश काल के बीच भी भारतीय स्थापत्य कला ने एक नई ऊँचाई ग्रहण की।

भारतीय स्थापत्य के बारे में एक विचारणीय प्रश्न यह है कि किसी प्राचीन स्थापत्य या कलाकृति में रचनाकारों का नाम उल्लिखित क्यों नहीं किया गया है? क्या प्राचीन भारतीय कला अनाम है या कुछ और कारण रहे हैं? दरअसल प्राचीन काल में कलाकार सामान्यतया उन शासकों तथा संभ्रांत लोगों के आश्रय में रहते थे, जो अपने धार्मिक उत्साह को इन व्यावसायिक वर्गों के माध्यम से अभिव्यक्त करने को सदा उत्सुक रहते थे। युग-युगांतर तक भारतीय कला का यह आत्मिक/धार्मिक उत्साह सारे देश में बिखरे स्मारकों और मंदिरों में प्रकट होता रहा है। यानी शासक और संभ्रांत लोगों के धन से निर्मित कलाकृतियाँ कलाकारों के नाम से नहीं पहचानी गईं, अपितु शासक के कालक्रम से ही जानी तथा समझी जाती रही हैं। दूसरी बात यह है कि भारत में कला और धर्म का घनिष्ठ संबंध रहा है। यहाँ कला में धर्म की भूमिका अथवा आध्यात्मिकता का अत्यधिक प्रभावशाली एवं व्यापक पक्ष दृष्टिगोचर होता है। परिणामस्वरूप कला संप्रेषण का माध्यम बनकर तत्कालीन समाज की आवश्यकता की पूरक बन गई। अध्ययन की दृष्टि से भारतीय स्थापत्य को उसकी प्रवृत्तियों/विशेषताओं तथा कालक्रम के संदर्भ में देखना ज़्यादा समीचीन होगा।

2.1 सैंधव वास्तुकला *(Indus Architecture)*

भारत में सर्वप्रथम हड़प्पा सभ्यता में सुव्यवस्थित स्थापत्य निर्माण (नगरों का प्रादुर्भाव) के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। हड़प्पा सभ्यता भारतीय संस्कृति की लंबी एवं वैविध्यपूर्ण कहानी का प्रारंभिक बिंदु है। इसका कालखंड लगभग 3000 ई. पू. से 2000 ई. पू. के बीच है। भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र में विकसित इस सभ्यता का क्षेत्रफल 1.3 मिलियन वर्ग किलोमीटर है। भारतीय वास्तुकला के प्राचीनतम नमूने हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, रोपड़, कालीबंगा, लोथल और रंगपुर आदि से पाए गए हैं।

नगर एक ऐसी सघन बसावट होता है, जिसकी जीविका प्रधानत: उद्योग-धंधों तथा व्यापार-वाणिज्य पर निर्भर करती है। हड़प्पा सभ्यता के नगर एकाएक विकसित नहीं हुए, बल्कि ये विकास की स्वाभाविक प्रक्रिया के अनुरूप विकसित हुए हैं। हड़प्पा-पूर्व की ग्रामीण संस्कृतियों (यथा-आमरी, कालीबंगा, प्राक्-हड़प्पा) को नगरीय सभ्यता बनने में हज़ार वर्ष से ऊपर लगे। अत: हड़प्पा सभ्यता के स्थापत्य की प्रमुख विशेषता इसकी नगर-निर्माण योजना है।

नगर स्थापत्य योजना *(City Architecture Planning)*

हड़प्पा और मोहनजोदड़ो स्थल सैंधव सभ्यता की नगर-निर्माण योजना का आदर्श साक्ष्य देते हैं। हड़प्पा सभ्यता के सभी नगरों के स्थापत्य में स्थानीय क्षेत्रीय प्रभेद के साथ अधिकांशत: समरूपता के दर्शन ही होते हैं। सैंधव स्थापत्य की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

- हड़प्पा सभ्यता के समस्त नगर 'ग्रिड प्लानिंग' के तहत बसाए गए थे, यानी आयताकार खंड में विभाजित नगर, जहाँ सड़कें एक-दूसरे को समकोण पर काटती थीं।
- हड़प्पा सभ्यता के नगरीय क्षेत्र दो हिस्सों में बँटे थे– दुर्ग-गढ़ी क्षेत्र या पश्चिमी टीला तथा दूसरा पूर्वी टीला।
- भवनों में पक्की और निश्चित आकार की ईंटों के अलावा लकड़ी और पत्थर का भी प्रयोग किया जाता था।
- बरामदा घर के बीचोंबीच बनाया जाता था और कमरों के द्वार इसी बरामदे की ओर खुलते थे, जबकि मुख्य द्वार हमेशा घर के पीछे खुलता था।
- फर्श व दीवार की जुड़ाई में जिप्सम का प्रयोग होता था।

अध्याय
3

भारतीय मूर्तिकला (Indian Sculpture)

प्राचीन भारत में मूर्तिकला का विकास अन्य ललित कलाओं, जैसे- स्थापत्य तथा चित्रकला के साथ ही हुआ दिखता है। मूर्तिकार किसी भावना को मिट्टी, पत्थर अथवा धातु से मंदिर की दीवारों या उसके भीतरी भागों में उकेर देता है। भारत में मृण्मूर्तिकला, धातु मूर्तिकला, पाषाण मूर्तिकला आदि का विकास मूर्तिकला के अंतर्गत क्रमशः सैंधव, मौर्य, मौर्योत्तर, गुप्त और आधुनिक कालों में हुआ।

3.1 सैंधव मूर्तिकला *(Indus Sculpture)*

अन्य कलाओं के समान ही भारतीय मूर्तिकला भी अत्यंत प्राचीन है। यद्यपि, पाषाण काल में मानव अपने पाषाण उपकरणों को कुशलतापूर्वक काट-छाँटकर विशेष आकार देता था और पत्थर के टुकड़े से फलक निकालते हुए 'दबाव' तकनीक या पटककर तोड़ने की तकनीक का इस्तेमाल करने लगा था। मूर्तिकला का प्राचीनतम साक्ष्य उच्च पुरापाषाण काल से दिखाई देता है, जहाँ की बेलन घाटी में लोहंदा नाला से अस्थि निर्मित मातृदेवी की मूर्ति प्राप्त हुई है। इसके बाद के कालखंड में भी पाषाण मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं, परंतु भारत में मूर्तिकला अपने वास्तविक रूप में हड़प्पा सभ्यता के दौरान ही अस्तित्व में आई। सैंधव सभ्यता की खुदाई में अनेक मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। इस प्रकार लगभग 4000 वर्ष पूर्व ही भारत में मूर्ति निर्माण तकनीक के विकसित होने का प्रमाण मिल जाता है।

हड़प्पा सभ्यता में मृण्मूर्ति (मिट्टी की मूर्ति), प्रस्तर मूर्ति तथा धातु मूर्ति तीनों गढ़ी जाती थीं। प्रस्तर एवं धातु की मूर्तियाँ यद्यपि कम हैं, तथापि वे कलात्मक दृष्टि से उच्चकोटि की हैं।

मृण्मूर्ति *(Terracotta)*

मनुष्य ने मूर्ति गढ़ने की कला की शुरुआत मिट्टी से की। मिट्टी की छोटी-छोटी मूर्तियों को 'मृण्मूर्ति' कहा जाता है। हड़प्पा सभ्यता में मृण्मूर्ति के साक्ष्य बहुतायत में मिलते हैं। मृण्मूर्ति की निर्माण सामग्री के रूप में मिट्टी तथा साँचा प्रमुख हैं। इसके बनाने की विधि है– अंग-प्रत्यंग जोड़कर मूर्ति का निर्माण करना। हाथ के अंगूठे यानी चुटकी का इस्तेमाल करके हड़प्पा में मूर्ति का निर्माण होता था। इसे 'चिपकवा विधि' कहते हैं। मृण्मूर्ति के मुख्य विषय हैं– सीटियाँ, झुनझुना, खिलौना, पशु-पक्षी और नारी-पुरुष। इनमें सर्वाधिक मृण्मूर्तियाँ सीटियों तथा झुनझुनों की हैं और सबसे कम पुरुषों की। मृण्मूर्ति में वर्णित विषयों के आधार पर हड़प्पा की मृण्मूर्तियों का उद्देश्य धार्मिक भी नज़र आता है और धर्मनिरपेक्ष भी। हड़प्पा से प्राप्त विशिष्ट मृण्मूर्तियों के उदाहरण हैं–

- विवादित गाय मृण्मूर्ति- लोथल से
- विवादित घोड़ा मृण्मूर्ति- लोथल से
- फ्रेंच कट दाढ़ी में पुरुष मृण्मूर्ति- लोथल से
- मातृदेवी की दो मृण्मूर्तियाँ- बनावली और राखीगढ़ी से

हिलते हुए सिर का पशु खिलौना, मोहनजोदड़ो

हड़प्पा सभ्यता की मृण्मूर्तियों में पुरुष आकृतियों को श्रृंगयुक्त (सींग) दिखाया गया है। विभिन्न स्थलों से प्राप्त पुरुष मृण्मूर्तियों के साधारण गठन से सूचित होता है कि निर्माता-कलाकार की इसमें कोई खास रुचि नहीं थी। नारी मृण्मूर्तियाँ अपेक्षाकृत सुंदर तथा प्रभावोत्पादक हैं। इन्हें गहनों से लादा गया है। इनके मस्तक पर पंखे के समान फैला हुआ आवरण, कानों में गोलाकार कुंडल, गले में कंठा, छाती पर कई लड़ियों वाला हार, कमर में मेखला तथा भुजाओं में भुजबंद प्रदर्शित किये गए

अध्याय 4

भारतीय नृत्य परंपरा (Indian Dance Tradition)

नृत्य एक प्रकार का सशक्त आवेग है। मनुष्य के जीवन के दोनों पक्षों-सुख और दुख में नृत्य हृदय को व्यक्त करने का अचूक माध्यम है। लेकिन नृत्य कला एक ऐसा आवेग है, जिसे कुशल कलाकारों के द्वारा ऐसी क्रिया में बदल दिया जाता है, जो गहन रूप से अभिव्यक्तिपूर्ण होती है और दर्शकों को आनन्दित करती है। परिभाषा के तौर पर देखें तो अंग-प्रत्यंग एवं मनोभाव के साथ की गई नियंत्रित यति-गति को नृत्य कहा जाता है। नृत्य में करण, अंगहार, विभाव, भाव, अनुभाव और रसों की अभिव्यक्ति की जाती है। नृत्य के दो प्रकार हैं- नाट्य और अनाट्य।

मनुष्य और देवों के अनुकरण को नाट्य कहा जाता है और अनुकरण से रहित नृत्य को अनाट्य कहा जाता है।

शारीरिक गति या संचालन, नृत्य या तालबद्ध गति मनुष्य की प्राचीनतम अभिव्यक्तियों में से एक है। सभी समाजों में किसी न किसी रूप में नृत्य विद्यमान है। प्रागैतिहासिक गुफा चित्रों से लेकर आधुनिक कला मर्मज्ञों, सभी ने गति और भावनाओं के प्रदर्शन को अपनी कलाओं में बाँधने का प्रयास किया है।

4.1 शास्त्रीय नृत्य *(Classical Dance)*

शास्त्रीय नृत्य में नर्तक अपनी भंगिमाओं के जरिये एक कथा को नृत्य के माध्यम से मंचन कर प्रस्तुत करता है। कुछ शास्त्रीय नृत्यों में जैसे कथकली, कुचिपुड़ी में लोकप्रिय हिंदू पौराणिक कथाओं का अभिनय होता है। लोकदृष्टि से शिव की नटराज मूर्ति, शास्त्रीय नृत्य का प्रतीक है, जिसमें नृत्य के हाव-भाव एवं मुद्राओं का समावेश है। शास्त्रीय नृत्य मूल रूप से शास्त्रीय पद्धति पर आधारित है। शास्त्रीय नृत्य से संबंधित उल्लेख भरतमुनि द्वारा लिखित 'नाट्यशास्त्र' एवं आचार्य नंदिकेश्वर द्वारा रचित 'अभिनय दर्पण' में मिलता है। नाट्यशास्त्र में वर्णित मुद्राएँ ही भारतीय शास्त्रीय नृत्य की मूल आधार हैं।

भारतीय नृत्य परंपरा में शास्त्रीय नृत्य की 4 शैलियाँ प्रचलित थीं- भरतनाट्यम, कथकली, कथक एवं मणिपुरी। कुचिपुड़ी एवं ओडिसी को शास्त्रीय नृत्य की मान्यता बाद में मिली। लगभग 20 वर्ष पहले मोहिनीअट्टम को शास्त्रीय नृत्य शैली के रूप में ख्याति मिली, जबकि सत्रिया नृत्य शैली को संगीत नाटक अकादमी द्वारा 15 नवंबर, 2000 को शास्त्रीय नृत्य की सूची में सम्मिलित किया गया। इस प्रकार भारत में वर्तमान समय में 8 शास्त्रीय नृत्य प्रचलित हैं।

शास्त्रीय नृत्य की प्रमुख शैलियाँ *(Major Styles of classical dance)*

नृत्य का यदि भारतीय परम्परा में अवलोकन करें तो यह स्पष्ट होगा कि इसकी जड़ें परम्परा के विकास क्रम में सन्निहित हैं। इसी क्रम के परिणामस्वरूप इस विशाल उपमहाद्वीप में नृत्यों की विभिन्न विधाओं ने जन्म लिया है। प्रत्येक विधा ने विशिष्ट समय व वातावरण के प्रभाव से आकार ग्रहण किया है। प्रत्येक विधा किसी विशिष्ट क्षेत्र अथवा व्यक्तियों के समूह के लोकाचार का प्रतिनिधित्व करती है। शास्त्रीय नृत्यों में भरतनाट्यम, कुचिपुड़ी, कथक, कथकली, ओडिसी, मणिपुरी, मोहिनीअट्टम और सत्रिया शामिल हैं।

इन नृत्यों में दो प्रकार के भाव परिलक्षित हैं। एक है तांडव और दूसरा लास्य। तांडव भगवान शिव के रौद्र पौरुष का प्रतिनिधित्व करता है तो लास्य शिव की पत्नी पार्वती के लयात्मक लावण्य का प्रतिनिधित्व करता है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से जन्में भरतनाट्यम में लास्य की प्रधानता है और इसका उदय तमिलनाडु में हुआ है। कथकली केरल में जन्मीं तांडव भाव की मूकाभिनय नृत्य नाटिका है जिसमें भारी-भरकम कपड़े पहने जाते हैं और मुख एवं हस्त पर गहरा शृंगार किया जाता है। कथक लास्य व तांडव का मिश्रण है। क्लिष्ट पदताल व लयात्मक रचनाओं की गणितीय परिशुद्धता इसकी विशेषता है। इसी प्रकार पूर्वोत्तर राज्य मणिपुर के नृत्य मणिपुरी में लास्य की विशेषताएँ होती हैं। 1958 में नई दिल्ली स्थित संगीत नाटक अकादमी ने दो नृत्य शैलियों, आंध्र प्रदेश की कुचिपुड़ी व ओडिशा की ओडिसी शैली को शास्त्रीय नृत्य का दर्जा दिया।

अध्याय
5

भारतीय संगीत (Indian Music)

प्राकृतिक ध्वनियाँ कई प्रकार की होती हैं, लेकिन जिन ध्वनियों में लय होती है, केवल वही संगीत के लिये उपयोगी हैं, बाकी ध्वनियों का संगीत से कोई सरोकार नहीं है। संगीत, भाव उत्पन्न करने वाली ध्वनियों से पैदा होता है। भाव लाने वाली ध्वनियाँ ही संगीत का आधार हैं। संगीत शब्द गीत में सम् जोड़ने से बना है। सम् का आशय है सहित और गीत यानी कि गान। नृत्य और वादन के साथ किया गया गान ही संगीत है। भारतीय संगीत की अवधारणा में गायन, वादन और नृत्य अवश्य ही तीन अलग-अलग कलाएँ स्वीकार की गई हैं, लेकिन तीनों का मेल संगीत कहलाता है।

5.1 संगीत का इतिहास एवं सात स्वर
(History of Music and Seven Swaras)

संगीत का इतिहास देखें तो हम पाते हैं कि पौराणिक गाथाओं में इंद्र की सभा का उल्लेख कई जगह मिलता है, जहाँ देवराज इंद्र अपने सहयोगियों के साथ संगीत का आनंद ले रहे हैं। उनकी सभा में हमें गायक, नर्तक और वादकों की उपस्थिति का ज़िक्र मिलता है। कथाओं के दृश्य वर्णन में गंधर्व गाते हैं, अप्सराएँ नृत्य कर रही होती हैं और किन्नर वाद्य बजा रहे होते हैं। संगीत की सामाजिक जीवन में उपस्थिति के प्रारंभिक प्रमाण हमें सिंधु घाटी की सभ्यता में मिलते हैं। खुदाई में ऐसी मूर्तियाँ और सीलें मिली हैं, जिनमें ढोल बजाते हुए लोग बनाए गए हैं। कई मूर्तियों में नृत्य की भंगिमाएँ हैं। नर्तकी की एक प्रसिद्ध मूर्ति, जो कमर पर हाथ रखकर खड़ी है, लगता है नृत्य करने ही जा रही है। वैदिक युग के ग्रंथ ऋग्वेद में इसका ज़िक्र मिलता है कि आर्यों के मनोरंजन का मुख्य साधन संगीत था। इस युग के ग्रंथ सामवेद को भारतीय संगीत का मूल माना गया है। इस ग्रंथ में देवताओं की स्तुति करते हुए गाए जाने वाले मंत्रों का वर्णन मिलता है। सामवेद में उच्चारण के हिसाब से तीन प्रकार के स्वरों और संगीत के हिसाब से सात प्रकार के स्वरों का उल्लेख मिलता है। इसके अलावा रामायण और महाभारत में कई ऐसे प्रसंगों का उल्लेख है, जहाँ संगीत की उपस्थिति देखी जा सकती है। तैत्तिरीय उपनिषद्, शतपथ ब्राह्मण, याज्ञवल्क्य-रत्न प्रदीपिका और नारदीय शिक्षा प्रभृति आदि ग्रंथों में उस समय के संगीत का परिचय मिलता है, लेकिन संगीत की दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रंथ भरत मुनि का नाट्यशास्त्र है। इस ग्रंथ के छह अध्यायों में संगीत पर चर्चा की गई है। इसमें विभिन्न वाद्यों और उन्हें बजाने, छंद, लय और तालों का वर्णन मिलता है। इस ग्रंथ में छह रागों, यथा- राग भैरव, राग हिंडोल, राग कौशिक, राग दीपक, राग श्रीराग और राग मेघ का वर्णन मिलता है। इसी तरह का दूसरा महत्त्वपूर्ण ग्रंथ मतंग मुनि का वृहद्देशी है। इसकी रचना का काल पाँचवीं सदी है। संगीत के अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रंथों में नारद कृत नारदीय शिक्षा और संगीत मकरंद है।

आगे चलकर भारतीय संगीत में दो शास्त्रीय परंपराएँ विकसित हुईं। इनमें जो शास्त्रीय परंपरा उत्तर भारत में चली, उसे उत्तर भारतीय संगीत और जो धारा दक्षिण में बलवती हुई, उसे कर्नाटकी संगीत कहा गया। इन दोनों शास्त्रीय परंपराओं के अलावा लोक संगीत भी विकसित और पल्लवित होता रहा। ये तीनों धाराएँ आज भी प्रचलन में हैं और एक-दूसरे को प्रभावित कर रही हैं। इसके अलावा उपशास्त्रीय संगीत भी प्रचलन में है। उपशास्त्रीय संगीत में, शास्त्रीय संगीत की तुलना में गायक को थोड़ी-बहुत छूट रहती है। आधुनिक काल में उन्नीसवीं सदी में संगीत में क्रांतिकारी परिवर्तन दृष्टिगोचर हुआ। हुआ यह कि संगीत के दो विद्वानों ने संगीत के स्वरों की लिपि तैयार की, ताकि संगीत को लिखा जा सके। ये विद्वान थे- विष्णु नारायण भातखंडे और विष्णु दिगंबर पलुस्कर। उस समय तक जो संस्कृत ग्रंथ उपलब्ध थे, वे अधिकांशतः संस्कृत में थे और उन्हें समझना अपेक्षाकृत जटिल था। दूसरी समस्या यह थी कि संगीत को सुन-सुन कर ही लोगों ने सीखा और पीढ़ी-दर-पीढ़ी संगीत ऐसे ही विकसित हुआ। इसका एक दुष्परिणाम यह था कि संगीत की कई बारीकियाँ नष्ट हो गईं या परिवर्तित हो गईं। इसका समाधान केवल यही था कि संगीत की लिपि को कागज़ पर लिख लिया जाए, ताकि उसमें परिवर्तन की स्थिति का भान हो सके।

अध्याय
6

भारतीय चित्रकला (Indian Painting)

चित्रकला के उद्भव के संकेत मनुष्य की सभ्यता के प्रारंभिक काल से ही मिलने लगते हैं। जैसे-जैसे सभ्यता विकसित होती गई, वैसे-वैसे चित्रकला में भी अधिक प्रवीणता देखी जाने लगी। प्रागैतिहासिक काल में मनुष्य गुफाओं में रहता था तो उसने गुफाओं की दीवारों पर चित्रकारी की। बाद में जब नगरीय सभ्यता का उदय होने लगा तो चित्रकारी गुफाओं से निकलकर दैनिक प्रयोग होने वाले माध्यमों तक पहुँच गई। इसके नमूने बर्तनों, वस्त्रों आदि पर प्राप्त हुए हैं। बौद्ध और जैन धर्म के आगमन और उनकी समृद्धि के साथ-साथ चित्रकला में और अधिक कौशल एवं नवीनता के संकेत मिलने लगते हैं। तात्कालिक और उसके उत्तरोत्तर काल की कला में रंग संयोजन और भाव चित्रण, धार्मिकता के गहरे आवरण में डूबा हुआ था। इसके बाद मुगलों का दौर शुरू होने पर भारतीय चित्रकला में व्यापक परिवर्तन देखने को मिले। मुगल बादशाह जहाँगीर इस कला का बेहतरीन जानकार था। इस समय चित्रकारों को व्यापक राजकीय संरक्षण मिला, लेकिन उत्तर मुगल काल में गिरती राजनीतिक और आर्थिक स्थिति के कारण जब इन चित्रकारों को संरक्षण मिलना बंद हो गया तो इन्हें स्थानीय ज़मींदारों और राजाओं ने शरण दी। इस दौरान चित्रकला का व्यापक विकास हुआ। अंग्रेजी राज में एक बार फिर चित्रकला को नई दृष्टि मिली और कला में आंदोलनों का दौर प्रारंभ हुआ। आधुनिक समय के चित्रकारों को वैश्विक स्तर पर सराहना मिली और अद्यतन चित्रकारों ने कला में नवीनतम प्रयोग जैसे विनाइल, कंप्यूटर और विडियो पेंटिंग को अपनाना शुरू कर दिया है।

6.1 भारतीय चित्रकला की मुख्य विशेषताएँ
(Salient Features of Indian Painting)

प्रत्येक समाज की चित्रकला विशिष्ट होती है और वह अपनी ऊर्जा स्थानीय परंपराओं से ग्रहण करती है। भारतीय चित्रकला भी इसका अपवाद नहीं है। उसकी भी शक्ति का अंत:स्रोत यहाँ की परंपराएँ हैं। इसकी विशेषताओं को निम्नलिखित बिंदुओं में विभाजित करके देखा जा सकता है।

- **धार्मिक प्रभाव:** भारतीय चित्रकला के लिये धर्म एक बड़ा प्रेरणास्रोत रहा है। अजंता, बाघ आदि गुफाओं में भगवान बुद्ध के जीवन को, तो राजपूत एवं काँगड़ा आदि की चित्रकलाओं में राधा-कृष्ण और उनकी लीलाओं को स्थान दिया गया है। मुगल शैली में हमें संतों और फकीरों का चित्रण मिलता है। चित्रकला में आधुनिकता के उद्गम के साथ धार्मिक भावना में ह्रास के संकेत मिलने लगते हैं। चित्रकला में धार्मिकता के स्थान पर मनुष्य को केंद्र में रखा जाने लगा है। वर्तमान समय में चित्रकारों ने भगवान गणेश के चित्र के साथ अनुपम प्रयोग किये हैं और उन्हें अनेक प्रकार की आकृतियों और भावमुद्रा में प्रस्तुत किया है।
- **कल्पनाशीलता:** भारतीय चित्रकारों का मन यथार्थ की अपेक्षा कल्पना में ज्यादा रमा है। अनेक देवी-देवताओं को चित्रकारों ने कल्पना की शक्ति के सहारे उन्हें ऐसा जीवंत रूप प्रदान किया कि एक सामान्य हिंदू के मन में ईश्वर का प्रत्यय किसी चित्र के सहारे ही उद्दीप्त हो जाता है। भगवान बुद्ध से जुड़ी कथा के चित्र कल्पना प्रसूत हैं। सृष्टि के संहार और सृजन को कलाकारों ने कल्पना शक्ति के माध्यम से एक छोटे चित्र में ही उकेर कर रख दिया है।
- **पर्यावरण:** भारतीय संस्कृति पर्यावरण के संरक्षण के साथ सहगामी प्रवृत्ति रखती है। यह प्रवृत्ति चित्रकला में स्पष्ट दिखाई पड़ती है। यहाँ की चित्रकला में कई प्रकार के पेड़, वनस्पतियों, पर्वत, नदियों और पशु पक्षियों का विशद चित्रण मिलता है। इन चित्रों में पुरुष यानी आत्म-तत्त्व और प्रकृति के समन्वय के दर्शन होते हैं। इतना ही नहीं, सौंदर्य के चित्रण में प्रेरणा का स्रोत पर्यावरण भी है। कमल या मृग जैसे नेत्र, कदली स्तंभ जैसे पैर, कमल नाल जैसे हाथ, तोते जैसी नासिका तथा कटि या अन्य मानवीय अंगों की प्रेरणास्रोत प्रकृति ही रही है।

अध्याय 7

पारंपरिक भारतीय वस्त्र, भोजन एवं रीति-रिवाज (Traditional Indian Dresses, Foods and Customs)

भारत में कपड़ों के विभिन्न प्रकारों, को पहनने के तरीकों की एक विशद परंपरा है। यह परंपरा क्षेत्र बदलने के साथ बदल जाती है और उन पर क्षेत्र विशेष के भूगोल, पर्यावरण और सांस्कृतिक परंपरा का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। ऐतिहासिक संदर्भों के अवलोकन से ज्ञात होता है कि स्त्री और पुरुषों का प्रथम वस्त्र वृक्ष के पत्तों या छाल से निर्मित था। इसे कटि प्रदेश से नीचे के हिस्से को ढँकने के लिये प्रयोग किया जाता था। धागे के ज्ञान से कपड़े का बनाया जाना संभव हुआ और शरीर के अन्य अंगों को ढँकने की परंपरा के विकास के साथ-साथ विविधता भी परिलक्षित होने लगी। धीरे-धीरे पर्वों, शुभ अवसरों और अन्य सामूहिक गतिविधियों एवं गीत-संगीत के कार्यक्रमों के लिये सामान्य रोज़मर्रा में पहने जाने वाले वस्त्रों से भिन्न प्रकार के वस्त्र पहने जाने का चलन शुरू हुआ। कपड़ों की रँगाई और विभिन्न रँगों से रँगे कपड़ों के अर्थ निकाले जाने का प्रचलन भी परंपरागत परिप्रेक्ष्य के रूप में शुरू हुआ। उदाहरण के तौर पर हिंदू समुदाय शोक के अवसरों पर श्वेत वस्त्र धारण करते हैं, जबकि पारसी समुदाय उल्लास के अवसरों पर श्वेत वस्त्र पहनते हैं।

रंगों का निर्माण

नील की खेती से मिले नील से वस्त्रों पर नीले रंग से रँगाई होती थी। इसके अलावा नील का प्रयोग नीले रंग से जुड़े अन्य रंगों को बनाने में होता था जैसे- आसमानी, जामुनी और बैंगनी आदि। हरा रंग लाने के लिये पहले हल्दी से रँगाई होती थी, फिर नीले रंग से, लेकिन इन प्रक्रियाओं से कच्चे रंग ही बनते थे। इन्हें पक्का करने के लिये खाने वाले सोडा (सोडियम बाईकार्बोनेट) चीनी और कसीस का प्रयोग होता था। अवध और कोटा में उगाए जाने वाले आल के पौधे की जड़ की छाल से चमकीला लाल रंग बनाया जाता था। लाल रंग मंजिष्ठा से भी प्राप्त किया जाता था। इसे 'मजीठा' भी कहा गया है और इसका प्रयोग रंग पक्का करने में भी होता था। दक्षिण भारत में उगने वाले दंदासा या रंगली दातुन और कचनार के पेड़ की छाल का प्रयोग भी लाल रंग प्राप्त करने में किया जाता था। नारंगी-पीले रंग के लिये शाहाब के प्रयोग का उल्लेख मिलता है, जिसे जाफरान के साथ प्रयोग किया जाता था। पीला रंग धाओ के फूल, हर्र-बहेड़ा-आँवला, ढाक और हरसिंगार से प्राप्त किया जाता था। भूरा रंग बबूल की छाल, कत्थे और मेंहदी से तैयार होता था। कपड़ों की रँगाई के लिये लाख का प्रयोग भी होता था, हालाँकि महँगा होने के कारण इसका प्रयोग सीमित था।

7.1 भारत में परिधान का इतिहास *(History of Clothing in India)*

ऐतिहासिक साक्ष्यों पर यदि दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट है कि हड़प्पा काल में कपास के धागों से बने हुए वस्त्रों का प्रयोग होता था। इसके अलावा रेशमी एवं ऊनी वस्त्रों के प्रयोग के भी प्रमाण हैं। एलोरा की गुफाओं में मिली मूर्तियों, अजंता तथा अन्य जगहों से मिले भित्ति चित्रों में पुरुषों को धोती और महिलाओं को साड़ी पहने दिखाया गया है। कपड़े पहनने की यह परंपरागत शैली आज तक अक्षुण्ण चली आ रही है। जातककालीन मानव-समाज भी विभिन्न प्रकार के वस्त्रों-सूती, ऊनी, क्षौम, कौषिए (सिल्क) आदि से परिचित था। 'तुण्डिल जातक' के अनुसार, बनारस में कपास के खेत थे। 'महाउम्मग जातक' में गाँव के बाहर स्थित कपास के खेतों की रखवाली करने वाली नारियों का उल्लेख प्राप्त होता है। इसी जातक के अनुसार रखवाली करते समय ही खेत-रक्षिका ने वहीं से कपास लेकर बारीक सूत कातकर गोला बनाया। सूती वस्त्र निर्माण के साथ-साथ उत्तर प्रदेश के बनारस और बिहार के भागलपुर में आधुनिक युग की भाँति उच्च कोटि का सिल्क निर्माण कार्य किया जाता था। रेशमी और सूती वस्त्र बहुत लोकप्रिय थे। क्षोम्य (ऊनी) सामान्य वस्त्र था, जिससे भिक्षु अपने चीवर बनाते थे। जातकों में उच्च वर्ग के द्वारा क्षौम वस्त्र के प्रयोग का उल्लेख मिलता है। जातकों में भी गांधार कंबल को विशेष महत्त्व दिया गया है। वस्त्रों को तंतुवाय (कोलिय) जाति के लोग बुनते थे।

वैदिक आख्यानों में वर्णन आता है कि सर्वप्रथम ऋषि गृत्स्मद ने कपास का पौधा उगाया और अपने इस प्रयोग से दस सेर कपास की प्राप्ति कर सूत बनाया। इस सूत से वस्त्र कैसे बनाया, यह समस्या थी। इसके समाधान के लिये उन्होंने लकड़ी की तकली बनायी। वैदिक भाषा में कच्चे धागे को तंतु कहते हैं। तंतु बनाते समय अधिक बचा हिस्सा ओतु कहा जाता है।

अध्याय 8

भारत की परंपरागत युद्धकलाएँ एवं खेल (India's Traditional Martial Arts and Games)

भारत में अगर परंपरागत युद्धकलाओं एवं खेल में देखा जाए तो जहाँ क्षत्रियों को शारीरिक विकास के लिये रथ दौड़, धनुर्विद्या, तलवारबाजी, मल्ल-युद्ध, कुश्ती, भाला फेंक आदि का प्रशिक्षण दिया जाता था तो वहीं अन्य वर्ग भी बैलगाड़ियों एवं दक्षिण में नौका दौड़ में भाग लेते थे। मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा के अवशेषों से यह पता चलता है कि सिंधु घाटी सभ्यता में अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र एवं खेल के उपकरण प्रयोग किये जाते थे। वैसे तो युद्धकलाओं का विकास सर्वप्रथम भारत में हुआ, जिसे बौद्ध प्रचारकों ने पूरे एशिया में फैलाया।

8.1 भारत की प्रमुख युद्धकला *(India's Major Martial Arts)*

मूल रूप से 1920 के दशक में प्रचलन में आया 'मार्शल आर्ट' शब्द मुख्य रूप से एशिया में प्रचलित युद्ध के तरीकों और पूर्व एशिया में जन्में लड़ाई के प्रकारों के संदर्भ में था। अत: इस रूप में मार्शल आर्ट या लड़ाई की कलाएँ, किसी शारीरिक हमले से बचाव के लिये प्रशिक्षण की परंपराएँ हैं। इनमें सिद्धहस्त होने के लिये नियमित अभ्यास और प्रशिक्षण की ज़रूरत होती है। इस कला का उद्देश्य हमला करना नहीं, अपितु बचाव या खतरे से अपनी रक्षा करना होता है। मार्शल आर्ट को विज्ञान और कला दोनों माना जाता है। विज्ञान इसलिये क्योंकि इसके नियम निश्चित हैं और कला इसलिये कि इसमें कौशल की अभिव्यक्ति होती है। कुछ प्रसिद्ध भारतीय युद्धकलाओं का परिचय इस प्रकार है-

कलारिपयट्टू *(Kalaripayattu)*

कलारिपयट्टू दो शब्दों 'कलारि' और 'पयट्टू' के मेल से बना है- जिसका शाब्दिक अर्थ युद्ध की कला का अभ्यास होता है। ऐसी मान्यता है कि प्राचीन समय में यह युद्ध शैली अगस्त्य ऋषि एवं भगवान परशुराम द्वारा सिखाई जाती थी। इसके साथ ही इस युद्धकला का वेदों में भी वर्णन मिलता है।

प्राचीन काल में 7 वर्ष से ऊपर के आयु वर्ग के बच्चों को इसका प्रशिक्षण दिया जाता था तथा इसे धार्मिक प्रथाओं में भी शामिल किया गया था। कलारिपयट्टू का उल्लेख संगम साहित्य में भी मिलता है। इसकी उत्पत्ति के संबंध में दो मत प्रचलित हैं। कुछ लोग इसकी उत्पत्ति स्थल केरल को मानते हैं, जबकि कुछ पूरे दक्षिण भारत को इसके उत्पत्ति स्थल के रूप में स्वीकार करते हैं।

प्राचीन समय में यह युद्ध शैली मूल रूप से वन्य जीवों से अपनी रक्षा के लिये शुरू की गई थी। इस युद्ध के बहुत सारे लय और आसन, जानवरों की मुद्रा एवं उनकी ताकत से प्रेरित हैं तथा उनके नाम भी उन्हीं के नाम पर आधारित हैं। कालांतर में इस शैली का प्रयोग जानवरों के साथ लड़ने की बजाय मनुष्यों के साथ लड़ने में किया जाने लगा। प्रारंभ में इस युद्ध शैली में झुकने की मुद्रा का इस्तेमाल किया जाता था, वहीं बाद में खड़े होने वाले आसनों का भी विकास किया गया। भगवान परशुराम की शैली में हथियारों के उपयोग का विकास हुआ तथा सप्तऋषि अगस्त्य की शैली में हाथों से लड़ना कायम रहा।

इस रूप में केरल के मार्शल आर्ट 'कलारिपयट्टू' को विश्व में मार्शल आर्ट का सर्वाधिक प्राचीन और सबसे वैज्ञानिक रूप माना जाता है। लड़ाई का 'कलारि याती' नामक प्रशिक्षण स्कूल में दिया जाता है। कलारि के नियमों के तहत मार्शल आर्ट के प्रशिक्षण की शुरुआत शरीर की तेल-मालिश से की जाती है, जो देह को फुर्तीला और लचीला बनाती है। इसके बाद चाट्टोम (कूद), ओट्टम (दौड़), मरिचिल (कलाबाज़ी) आदि करतब सिखाए जाते हैं, जिसके बाद कटार, तलवार, भाला, गदा, धनुष-बाण जैसे हथियार चलाने की विद्या सिखाई जाती है।

अध्याय 9

भारत की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ और भाषाएँ (India's Literary Tendencies and Language)

मानव जीवन के विकास से ही लिपियों का आविष्कार भी जुड़ा है। किसी भी भाषा की लिखित अभिव्यक्ति और साहित्य निरूपण के माध्यम को लिपियों के नाम से जाना जाता है। प्राचीन काल से ही मनुष्य अपनी संस्कृति, समाज, साहित्य और जीवन शैली के विभिन्न पहलुओं को लिपियों में निरूपित करता रहा है। प्रत्येक संस्कृति से संबद्ध लोगों ने स्वयं अपनी भाषा का विकास किया तथा इसके द्वारा अपनी समृद्ध साहित्यिक विरासत को सहेजने और संगृहीत करने का प्रयास किया।

आगे चलकर किसी समाज के सांस्कृतिक विकास के अध्ययन हेतु इन्हीं साहित्यिक विरासतों का उपयोग किया जाने लगा। इसे दूसरे रूप में कहें तो किसी विशेष संस्कृति एवं उसकी परंपराओं को जानने हेतु उस समाज की भाषाओं के क्रमिक विकास एवं साहित्यिक विधाओं का अध्ययन ज़रूरी हो जाता है।

9.1 प्राचीन काल की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ *(Literary Tendencies of Ancient Times)*

- **संस्कृत साहित्य:** संस्कृत हिंद-यूरोपीय भाषा परिवार की हिंद-ईरानी शाखा की हिंद-आर्य उप-शाखा में शामिल है। संस्कृत अधिकांश भारतीय भाषाओं की जननी है अर्थात् यह देश की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है। पाणिनी द्वारा लिखित 'अष्टाध्यायी' संस्कृत भाषा के व्याकरण का प्राचीनतम और आधार ग्रंथ है।

प्राचीन काल में हिंदू धर्म से संबंधित लगभग सभी धर्म ग्रंथ इसी भाषा में लिखे गए, साथ ही हिंदुओं के धार्मिक कर्मकांडों से जुड़े सभी मंत्रों के संस्कृत भाषा में होने तथा इस रूप में पुरोहितों की भाषा होने के कारण इसे समाज में उच्च स्थिति प्राप्त थी। अगर इस भाषा के दूसरी भाषाओं पर प्रभाव की बात करें तो हिंदी, बांग्ला, मराठी, सिंधी, पंजाबी, तमिल, तेलुगू आदि भाषाओं पर दिखाई देता है।

- **वैदिक साहित्य:** वैदिक साहित्य के सबसे प्राचीन ग्रंथ वेद हैं। वेदों से आर्यों के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक जीवन के संबंध में जानकारी मिलती है। वेद चार हैं- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद।

ऋग्वेद की रचना 1500 ई. पू. से 1000 ई. पू. के मध्य की गई थी। इसमें 10 मंडल एवं 1028 सूक्त हैं। ऋग्वेद में उल्लिखित मंत्रों को यज्ञ के अवसर पर होतृ नामक पुरोहित द्वारा उच्चारित किया जाता था। ऋग्वेद में लिखे गए अधिकांश सूक्त मानव जीवन के उच्चतम मूल्यों से संबंधित हैं तथा इसमें प्रकृति का बड़ा मनोरम चित्रण किया गया है।

वहीं यजुर्वेद में धार्मिक कर्मकांड एवं इससे संबंधित मंत्रों का वर्णन किया गया है। यजुर्वेद के मंत्रों को उच्चारित करने वाले पुरोहित को अध्वर्यु कहा जाता था। कर्मकांड से संबंधित जानकारी उपलब्ध कराने के कारण यह चारों वेदों में सर्वाधिक लोकप्रिय है। यह वेद गद्य एवं पद्य दोनों में रचित है, जिसमें तत्कालीन समय की सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति का वर्णन मिलता है।

सामवेद में ऋग्वैदिककालीन मंत्रों के संगीतमय उच्चारण करने की विधि का वर्णन है, इसलिये इसे 'भारतीय संगीत का जनक' भी कहा जाता है। वहीं अथर्ववेद मानव समाज की शांति एवं समृद्धि से संबंधित है। इसमें मनुष्य के दैनिक जीवन की चर्चा की गई है तथा 99 रोगों के उपचार की विधि का वर्णन है। अथर्ववेद को इस रूप में भी प्रसिद्धि प्राप्त है कि यह भारतीय सभ्यता के प्रारंभिक काल की धार्मिक वृत्ति का प्रतिनिधित्व करता है।

इन चारों वेदों के पश्चात् ब्राह्मण ग्रंथों का स्थान आता है। ब्राह्मण ग्रंथों में वैदिक कर्मकांड की विस्तृत व्याख्या, निर्देशन एवं यज्ञ विधान का वर्णन किया गया है। चारों वेदों के अपने ब्राह्मण ग्रंथ हैं। प्राचीन इतिहास के अध्ययन के साधन के तौर पर ऋग्वेद के पश्चात् ब्राह्मण ग्रंथों का स्थान आता है। इसमें तत्कालीन समय के सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक जीवन के विषय में जानकारी दी गई है।

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी, फ्लोचार्ट तथा मानचित्र का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- क्विक रिवीजन हेतु प्रत्येक अध्याय में महत्त्वपूर्ण तथ्यों का संकलन।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 011-47532596, +91-8130392354, 813039235456